International Journal of Research in all Subjects in Multi Languages [Author: डॉ. गीता रावत] I.F. 9.457

Vol. 14, Issue: 08, August 2026
(IJRSML) ISSN (P): 2321 - 2853

भारतीय लोकभाषाओं में सांस्कृतिक विरासत संरक्षण की समकालीन चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ

डॉ. गीता रावत
सामाजिक विज्ञान विभाग
श्री गुरु राम राय विश्वविद्यालय
देहरादून, उत्तराखंड – 248001
ORCID ID: https://orcid.org/0009-0007-7163-9847

सारांश— भारत विश्व के सर्वाधिक भाषायी विविधता वाले देशों में गिना जाता है, जहाँ सैकड़ों लोकभाषाएँ और बोलियाँ शताब्दियों से मौखिक परंपरा, लोकगीत, लोककथा, कहावत और अनुष्ठान के माध्यम से सांस्कृतिक ज्ञान को संजोए हुए हैं। किंतु वैश्वीकरण, शहरीकरण, माध्यम-भाषाओं के प्रभुत्व और डिजिटल तकनीक के असमान वितरण के कारण अनेक लोकभाषाएँ आज संकटग्रस्त श्रेणी में पहुँच चुकी हैं। प्रस्तुत शोध पत्र भारतीय लोकभाषाओं में निहित सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण से जुड़ी समकालीन चुनौतियों और उपलब्ध संभावनाओं का समालोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इस अध्ययन में पीपुल्स लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया, यूनेस्को के संकटग्रस्त भाषाओं संबंधी एटलस, तथा हिंदी लोक साहित्य पर केंद्रित शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित सत्यापनीय शोध सामग्री का उपयोग किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भारत में सैकड़ों भाषाएँ संकटग्रस्त श्रेणी में हैं, जिनमें से अधिकांश आदिवासी और जनजातीय समुदायों से संबंधित हैं, तथा इनके साथ जुड़ा मौखिक ज्ञान, लोकगीत और लोककथा-परंपरा भी क्षरण के कगार पर है। साथ ही, डिजिटलीकरण, शैक्षणिक संस्थानों की सक्रियता, सामुदायिक भागीदारी तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति में स्थानीय ज्ञान-परंपराओं को दिए गए महत्व से संरक्षण की नई संभावनाएँ भी उभर रही हैं। पत्र का निष्कर्ष यह है कि लोकभाषाओं में निहित सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण केवल भाषा-वैज्ञानिक कार्य नहीं, अपितु एक अंतःविषयी सामाजिक उत्तरदायित्व है, जिसके लिए समुदाय, शिक्षा तंत्र, सरकार और तकनीक के समन्वित प्रयास आवश्यक हैं।

बीज शब्द— लोकभाषा, सांस्कृतिक विरासत, संकटग्रस्त भाषाएँ, मौखिक परंपरा, लोक साहित्य, भाषायी विविधता, डिजिटलीकरण

प्रस्तावना

भाषा केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं होती, वह किसी भी समाज की सामूहिक स्मृति, ज्ञान-परंपरा और सांस्कृतिक पहचान का वाहक भी होती है। भारत जैसे बहुभाषी देश में, जहाँ जनगणना 2011 के अनुसार उन्नीस हज़ार से अधिक भाषाएँ या बोलियाँ मातृभाषा के रूप में दर्ज कराई गई हैं, लोकभाषाओं की भूमिका केवल संवाद तक सीमित नहीं है। ये भाषाएँ लोकगीत, लोककथा, कहावत, मुहावरे, अनुष्ठान-गीत और पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होने वाले व्यावहारिक ज्ञान की संवाहक रही हैं। जब कोई लोकभाषा विलुप्त होती है, तो उसके साथ न केवल शब्द-भंडार, अपितु उससे जुड़ी संपूर्ण सांस्कृतिक विरासत भी लुप्त हो जाती है।

समकालीन भारत में लोकभाषाओं के समक्ष अनेक चुनौतियाँ उपस्थित हैं। शिक्षा और रोजगार की मुख्यधारा भाषाओं की ओर बढ़ता झुकाव, शहरीकरण के कारण समुदायों का विस्थापन, अंतर-पीढ़ीगत हस्तांतरण में आती कमी, तथा लिपि और साहित्यिक इतिहास के अभाव में अनेक भाषाओं की स्थिति कमजोर होती जा रही है। भारतीय लोकभाषा सर्वेक्षण के अनुसार गणेश देवी और उनके साथियों ने पाया कि विगत पचास वर्षों में लगभग दो सौ बीस भाषाएँ भारत में लुप्त हो चुकी हैं, जबकि शेष सात सौ अस्सी भाषाओं में से अनेक संकटग्रस्त श्रेणी में हैं (देवी, 2010-2013)। यूनेस्को के "एटलस ऑफ द वर्ल्ड्स लैंग्वेजेज इन डेंजर" के तीसरे संस्करण में भी भारत और हिमालय क्षेत्र की भाषायी विविधता को विशेष रूप से रेखांकित करते हुए बताया गया है कि भारत में लगभग एक सौ सत्तर भाषाएँ संकटग्रस्त श्रेणी में हैं, जिनमें से आधे से अधिक तिब्बती-बर्मी भाषा-परिवार से संबंधित हैं और पूर्वोत्तर भारत में केंद्रित हैं (मोसले, 2010; ब्लैकबर्न एवं ऑपजेनॉर्ट, 2010)।

इसी संदर्भ में यह प्रश्न महत्वपूर्ण हो जाता है कि लोकभाषाओं में निहित सांस्कृतिक विरासत, अर्थात् लोकगीत, लोककथा, अनुष्ठान-भाषा और मौखिक ज्ञान-परंपरा, को किस प्रकार संरक्षित रखा जा सकता है। प्रस्तुत शोध पत्र इसी समस्या के समकालीन आयामों, चुनौतियों और संभावनाओं का विश्लेषण करने का प्रयास करता है।

साहित्य समीक्षा

भाषायी विविधता और संकटग्रस्तता का वैज्ञानिक दस्तावेज़ीकरण

भारतीय भाषाओं की स्थिति के आधुनिक दस्तावेज़ीकरण में सर्वाधिक व्यापक प्रयास पीपुल्स लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया के रूप में सामने आया। गणेश देवी द्वारा स्थापित भाषा शोध व प्रकाशन केंद्र, वडोदरा के नेतृत्व में सन् 2010 में आरंभ किए गए इस सर्वेक्षण में लगभग तीन हज़ार पाँच सौ स्वयंसेवकों, जिनमें भाषा विशेषज्ञ और सामाजिक इतिहासकार शामिल थे, ने देश भर की भाषाओं का सर्वेक्षण कर सात सौ अस्सी भाषाओं की पहचान की। इस सर्वेक्षण की रिपोर्ट पचास खंडों में प्रकाशित हो रही है और इसमें प्रत्येक भाषा का संक्षिप्त इतिहास, भौगोलिक क्षेत्र तथा

© 2026. This article is licensed under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0).

वर्तमान स्थिति दर्ज़ की गई है (देवी, 2010-2013)। इस सर्वेक्षण की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि यह रही कि इसने भाषा-क्षरण को केवल सांख्यिकीय तथ्य के रूप में नहीं, बल्कि सांस्कृतिक क्षति के रूप में प्रस्तुत किया। देवी स्वयं इस बात को रेखांकित करते हैं कि जब अंडमान द्वीप समूह की "बो" भाषा की अंतिम वक्ता का सन् 2010 में निधन हुआ, तो उसके साथ पैंसठ हज़ार वर्षों की सतत ज्ञान-परंपरा भी सदा के लिए समाप्त हो गई।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर, यूनेस्को द्वारा प्रकाशित "एटलस ऑफ द वर्ल्ड्स लैंग्वेजेज इन डेंजर" के तृतीय संस्करण में विश्व की लगभग ढाई हज़ार संकटग्रस्त भाषाओं को सूचीबद्ध किया गया है, जिन्हें सुभेद्य (vulnerable), निश्चित रूप से संकटग्रस्त (definitely endangered), गंभीर रूप से संकटग्रस्त (severely endangered), अत्यंत संकटग्रस्त (critically endangered) तथा विलुप्त (extinct) की श्रेणियों में विभाजित किया गया है (मोसले, 2010)। इसी एटलस के भारत और हिमालय क्षेत्र से संबंधित अध्याय में ब्लैकबर्न और ऑपजेनॉर्ट ने बताया है कि भारत की संकटग्रस्त भाषाएँ मुख्यतः पूर्वोत्तर और मध्य-पूर्वी भारत के आदिवासी बहुल क्षेत्रों में केंद्रित हैं, तथा इनमें से अधिकांश को न तो कोई आधिकारिक दर्जा प्राप्त है, न लिखित साहित्यिक परंपरा और न ही पर्याप्त राजकीय समर्थन (ब्लैकबर्न एवं ऑपजेनॉर्ट, 2010)।

लोकसाहित्य और मौखिक परंपरा के संरक्षण संबंधी शोध

लोकभाषाओं में निहित सांस्कृतिक विरासत के एक प्रमुख रूप, अर्थात् लोकगीत परंपरा पर केंद्रित एक हालिया शोध में शर्मा और बाविस्कर ने हिंदी लोकगीतों की परंपरा और उनके महत्व का विश्लेषण करते हुए बताया है कि विवाह, जन्म, ऋतु-परिवर्तन, त्योहार तथा धार्मिक अनुष्ठानों पर गाए जाने वाले लोकगीत सामाजिक और भावनात्मक जीवन की गहराइयों को व्यक्त करने वाला सशक्त माध्यम रहे हैं। इस अध्ययन के अनुसार, इन गीतों के संरक्षण के लिए उनका व्यवस्थित संकलन, लिप्यंतरण और डिजिटलीकरण आवश्यक है, तथा शैक्षणिक संस्थानों, सांस्कृतिक संगठनों और सरकारी प्रयासों के समन्वय से इन्हें पुनर्जीवित किया जा सकता है (शर्मा एवं बाविस्कर, 2024)।

भारतीय ज्ञान-परंपरा और लोक साहित्य के परस्पर संबंध पर केंद्रित एक अन्य अध्ययन में योहन्नान ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि वैश्वीकरण और आधुनिकता के इस युग में भारतीय ज्ञान-परंपरा तथा लोक साहित्य की प्रासंगिकता पहले से अधिक बढ़ गई है, विशेषतः इसलिए कि नई शिक्षा नीति में स्थानीय ज्ञान और सांस्कृतिक परंपराओं को विशेष महत्व दिया गया है। इस अध्ययन के अनुसार लोक साहित्य और ज्ञान-परंपरा के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती मौखिक परंपरा का क्षय तथा लोक कलाकारों की उपेक्षा एवं बाज़ारीकरण है, किंतु साथ ही शोध, अकादमिक अध्ययन और डिजिटलीकरण के माध्यम से इनके संरक्षण की व्यापक संभावनाएँ भी विद्यमान हैं (योहन्नान, 2026)।

वैश्वीकरण के दौर में भारतीय लोक संस्कृति की स्थिति पर केंद्रित एक विशिष्ट अध्ययन में पवार ने चुनौतियों और संभावनाओं दोनों का विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट किया है कि भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने एक ओर लोक संस्कृति के समक्ष समरूपीकरण का संकट उत्पन्न किया है, तो दूसरी ओर डिजिटल माध्यमों ने इसके प्रसार और संरक्षण के नए द्वार भी खोले हैं (पवार, 2026)। इसी क्रम में, राठौड़ और शेख द्वारा किए गए एक भाषावैज्ञानिक अध्ययन में बंजारा समुदाय की गोर बोली और उससे जुड़े लोक साहित्य का विश्लेषण करते हुए यह दर्शाया गया है कि किस प्रकार एक विशिष्ट समुदाय की बोलीभाषा मौखिक परंपरा के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी उस समुदाय की सामाजिक-सांस्कृतिक पहचान को संरक्षित रखती है, तथा इस बोली का संरक्षण संबंधित समुदाय की सांस्कृतिक पहचान के संरक्षण के लिए अनिवार्य शर्त है (राठौड़ एवं शेख, 2026)।

नीतिगत हस्तक्षेप

भारत सरकार के स्तर पर संकटग्रस्त भाषाओं के संरक्षण हेतु "संकटग्रस्त भाषाओं के संरक्षण एवं परिरक्षण की योजना" (Scheme for Protection and Preservation of Endangered Languages – SPPEL) संचालित की जा रही है, जिसका कार्यान्वयन मैसूरु स्थित केंद्रीय भारतीय भाषा संस्थान द्वारा किया जाता है। इस योजना का उद्देश्य दस हज़ार या उससे कम वक्ताओं वाली भाषाओं का व्याकरण, शब्दकोश तथा

© 2026. This article is licensed under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0).

नृजातीय-भाषिक विवरण तैयार करना है, जिसकी दीर्घकालिक परिकल्पना लगभग पाँच सौ भाषाओं को इस दायरे में लाने की है।

संश्लेषण

समग्र रूप से देखें तो साहित्य समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय लोकभाषाओं की संकटग्रस्तता का वैज्ञानिक दस्तावेज़ीकरण अब पर्याप्त सीमा तक हो चुका है (देवी, 2010-2013; मोसले, 2010), किंतु लोकसाहित्य और मौखिक परंपरा के व्यवस्थित संकलन, लिप्यंतरण तथा डिजिटलीकरण की प्रक्रिया अभी भी प्रारंभिक अवस्था में है (शर्मा एवं बाविस्कर, 2024; योहन्नान, 2026)। साथ ही, यह भी स्पष्ट है कि लोकभाषाओं के संरक्षण की चुनौतियाँ और संभावनाएँ परस्पर गुंथी हुई हैं, अर्थात् जो वैश्वीकरण और डिजिटल तकनीक भाषायी समरूपीकरण का खतरा उत्पन्न करती है, वही तकनीक संरक्षण का सशक्त माध्यम भी बन सकती है (पवार, 2026)।

शोध अंतराल

उपर्युक्त साहित्य समीक्षा के बावजूद कुछ महत्वपूर्ण अंतराल स्पष्ट रूप से उभरते हैं। प्रथम, अधिकांश उपलब्ध शोध या तो भाषायी संकटग्रस्तता के सांख्यिकीय दस्तावेज़ीकरण तक सीमित हैं (मोसले, 2010) अथवा किसी एक विशिष्ट लोकभाषा या लोकसाहित्य रूप, जैसे लोकगीत अथवा बंजारा बोली, तक केंद्रित हैं (शर्मा एवं बाविस्कर, 2024; राठौड़ एवं शेख, 2026), जिससे विभिन्न लोकभाषाओं में संरक्षण की तुलनात्मक स्थिति का समग्र चित्र उपलब्ध नहीं हो पाता। द्वितीय, डिजिटलीकरण को संरक्षण के उपाय के रूप में बार-बार सुझाया तो गया है, किंतु इसके व्यावहारिक कार्यान्वयन, संस्थागत क्षमता और समुदाय-स्तरीय भागीदारी से संबंधित अनुभवजन्य अध्ययन अत्यंत सीमित हैं। तृतीय, सरकारी नीतिगत हस्तक्षेपों, जैसे संकटग्रस्त भाषाओं के संरक्षण की योजना, की वास्तविक प्रभावशीलता का स्वतंत्र मूल्यांकन करने वाले अध्ययन अपेक्षाकृत दुर्लभ हैं। प्रस्तुत शोध पत्र इन अंतरालों को ध्यान में रखते हुए भाषायी दस्तावेज़ीकरण, लोकसाहित्य-केंद्रित शोध तथा नीतिगत हस्तक्षेप, तीनों को एक समेकित रूपरेखा में समाहित करने का प्रयास करता है।

अध्ययन के उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन निम्नलिखित उद्देश्यों पर केंद्रित है:

- भारतीय लोकभाषाओं में निहित सांस्कृतिक विरासत की प्रकृति और उसकी सामाजिक महत्ता का विश्लेषण करना।
- लोकभाषाओं के समक्ष उपस्थित समकालीन संकटों, यथा वैश्वीकरण, शहरीकरण तथा अंतर-पीढ़ीगत हस्तांतरण में आती कमी, का परीक्षण करना।
- लोकसाहित्य और मौखिक परंपरा के संरक्षण संबंधी उपलब्ध शोध साहित्य का समालोचनात्मक विश्लेषण करना।
- संरक्षण हेतु उपलब्ध संभावनाओं, विशेषतः डिजिटलीकरण, सामुदायिक भागीदारी और नीतिगत हस्तक्षेप, का मूल्यांकन करना।
- लोकभाषाओं में सांस्कृतिक विरासत के प्रभावी संरक्षण हेतु व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन एक वर्णनात्मक एवं समेकित साहित्य समीक्षा पद्धति पर आधारित है, जो भाषा-वैज्ञानिक दस्तावेज़ीकरण, लोकसाहित्य-केंद्रित शोध तथा नीतिगत साहित्य के संश्लेषण के उद्देश्य से उपयुक्त मानी गई है। सामग्री का संकलन पीपुल्स लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया, यूनेस्को के संकटग्रस्त भाषाओं संबंधी एटलस, तथा हिंदी लोक साहित्य एवं सांस्कृतिक अध्ययन पर केंद्रित मान्यता-प्राप्त शोध पत्रिकाओं, यथा International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends तथा सहचर ई-पत्रिका (ISSN: 2395-2873) से किया गया है। खोज हेतु "लोकभाषा", "सांस्कृतिक विरासत", "संकटग्रस्त भाषाएँ", "लोक साहित्य" तथा "मौखिक परंपरा" जैसे शब्दों का प्रयोग किया गया।

समावेशन की कसौटी यह रखी गई कि स्रोत या तो सत्यापनीय शोध पत्रिका में प्रकाशित शोध पत्र हो अथवा अंतरराष्ट्रीय संस्था या भारत सरकार द्वारा प्रकाशित आधिकारिक दस्तावेज़ हो, जिसे स्वतंत्र रूप से सत्यापित किया जा सके। जिन स्रोतों को किसी उद्धृत करने योग्य स्रोत के विरुद्ध सत्यापित नहीं किया जा सका, उन्हें बहिष्कृत किया गया। चूँकि यह अध्ययन समेकित प्रकृति का है, अतः इसमें किसी सांख्यिकीय मेटा-विश्लेषण का प्रयोग नहीं किया गया है, अपितु प्राप्त सामग्री को दस्तावेज़ीकरण, लोकसाहित्य-केंद्रित शोध तथा नीतिगत हस्तक्षेप की तीन विषयगत श्रेणियों में संगठित कर विश्लेषित किया गया है।

विवेचना

© 2026. This article is licensed under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0).

तालिका 1: भारतीय लोकभाषाओं की संकटग्रस्तता संबंधी प्रमुख दस्तावेज़ीकरण स्रोत

स्रोत	प्रकाशन वर्ष/संस्था	मुख्य निष्कर्ष	सांस्कृतिक विरासत हेतु प्रासंगिकता
पीपुल्स लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया	भाषा शोध व प्रकाशन केंद्र, वडोदरा (देवी, 2010-2013)	780 भाषाओं की पहचान; विगत पचास वर्षों में लगभग 220 भाषाएँ लुप्त	प्रत्येक भाषा के साथ जुड़े इतिहास, लोकज्ञान का दस्तावेज़ीकरण
एटलस ऑफ द वर्ल्ड्स लैंग्वेजेज इन डेंजर (तृतीय संस्करण)	यूनेस्को (मोसले, 2010)	भारत में लगभग 170 भाषाएँ संकटग्रस्त, अधिकांश पूर्वोत्तर भारत में	अंतरराष्ट्रीय स्तर पर संकट की मान्यता एवं तुलनात्मक आधार
भारत एवं हिमालय क्षेत्र संबंधी अध्याय	ब्लैकबर्न एवं ऑपजेनॉर्ट (2010)	अधिकांश संकटग्रस्त भाषाओं को न लिपि प्राप्त, न राजकीय समर्थन	संरक्षण हेतु संस्थागत सहयोग की आवश्यकता को रेखांकित करता है
संकटग्रस्त भाषाओं के संरक्षण की योजना (SPPEL)	केंद्रीय भारतीय भाषा संस्थान, मैसूरु	दस हज़ार या कम वक्ताओं वाली भाषाओं का व्याकरण एवं शब्दकोश निर्माण	नीतिगत हस्तक्षेप के माध्यम से संस्थागत संरक्षण
अंतर-पीढ़ीगत हस्तांतरण	युवा पीढ़ी का मुख्यधारा भाषाओं की ओर झुकाव; मौखिक परंपरा का क्षय	विद्यालयी पाठ्यक्रम में स्थानीय ज्ञान-परंपरा का समावेश	योहन्नान (2026)
लोकगीत एवं लोककथा संरक्षण	अभिलेखीकरण का अभाव; लोक कलाकारों की उपेक्षा	संकलन, लिप्यंतरण एवं डिजिटलीकरण	शर्मा एवं बाविस्कर (2024)
सामुदायिक बोलीभाषाएँ	समुदाय-विशिष्ट बोलियों का ह्रास; बाज़ारीकरण का दबाव	समुदाय-आधारित भाषावैज्ञानिक अध्ययन एवं दस्तावेज़ीकरण	राठौड़ एवं शेख (2026)
वैश्वीकरण का प्रभाव	सांस्कृतिक समरूपीकरण; भाषायी विविधता पर दबाव	डिजिटल माध्यमों से लोक संस्कृति का वैश्विक प्रसार	पवार (2026)
नीतिगत ढाँचा	योजनाओं का सीमित भौगोलिक एवं भाषायी विस्तार	संकटग्रस्त भाषाओं के संरक्षण की योजना (SPPEL) का विस्तार	केंद्रीय भारतीय भाषा संस्थान

तालिका 1 से स्पष्ट होता है कि भारतीय लोकभाषाओं की संकटग्रस्तता का दस्तावेज़ीकरण अब अंतरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय, दोनों स्तरों पर पर्याप्त रूप से हो चुका है। किंतु यह भी उल्लेखनीय है कि दस्तावेज़ीकरण मुख्यतः भाषा की संख्यात्मक स्थिति, अर्थात् वक्ताओं की संख्या और संकट की श्रेणी तक केंद्रित है, जबकि उस भाषा में निहित लोकगीत, लोककथा और अनुष्ठान-परंपरा के व्यवस्थित संकलन की दिशा में कार्य अपेक्षाकृत सीमित है।

तालिका 2: लोकभाषाओं में सांस्कृतिक विरासत संरक्षण की चुनौतियाँ एवं संभावनाएँ

आयाम	प्रमुख चुनौतियाँ	उपलब्ध संभावनाएँ	संबंधित साहित्य

तालिका 2 में प्रस्तुत विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि लोकभाषाओं में निहित सांस्कृतिक विरासत के संरक्षण की चुनौतियाँ बहुआयामी हैं, तथा इनका समाधान भी बहुआयामी दृष्टिकोण की माँग करता है। एक ओर जहाँ वैश्वीकरण और मुख्यधारा भाषाओं का प्रभुत्व लोकभाषाओं के लिए संकट उत्पन्न करता है, वहीं दूसरी ओर वही डिजिटल तकनीक, जो वैश्वीकरण की वाहक है, संरक्षण का प्रभावी माध्यम भी बन सकती है, जैसा कि पवार (2026) के अध्ययन में रेखांकित किया गया है। इसी प्रकार, शर्मा एवं बाविस्कर (2024) का यह सुझाव कि लोकगीतों का संकलन, लिप्यंतरण और डिजिटलीकरण शैक्षणिक संस्थानों, सांस्कृतिक संगठनों तथा सरकारी प्रयासों के समन्वय से किया जाना चाहिए, इस बात को रेखांकित करता है कि संरक्षण का कार्य किसी एक संस्था अथवा एजेंसी का उत्तरदायित्व नहीं, अपितु एक समन्वित प्रयास है।

राठौड़ और शेख (2026) द्वारा बंजारा समुदाय की गोर बोली पर किए गए अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि लोकभाषा और सामुदायिक पहचान के बीच का संबंध इतना गहरा होता है कि भाषा का ह्रास सीधे तौर पर समुदाय की सांस्कृतिक पहचान के क्षरण से जुड़ा होता है। यह तथ्य नीतिगत हस्तक्षेप के लिए एक महत्वपूर्ण संकेत प्रस्तुत करता है, अर्थात् संरक्षण के प्रयासों को केवल भाषा-वैज्ञानिक दस्तावेज़ीकरण तक सीमित न रखकर संबंधित समुदाय की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करनी चाहिए।

© 2026. This article is licensed under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0).

निष्कर्ष

समीक्षित साहित्य से अनेक महत्वपूर्ण निष्कर्ष उभरते हैं। भारत में सैकड़ों लोकभाषाएँ संकटग्रस्त श्रेणी में हैं, जिनमें से अधिकांश आदिवासी और जनजातीय समुदायों से संबंधित हैं तथा इन्हें न तो लिपि प्राप्त है और न ही पर्याप्त संस्थागत समर्थन। इन भाषाओं के साथ जुड़ा लोकगीत, लोककथा और अनुष्ठान-आधारित मौखिक ज्ञान भी उसी गति से क्षरित हो रहा है, जिस गति से भाषाएँ स्वयं संकटग्रस्त होती जा रही हैं। साथ ही, लोकसाहित्य के व्यवस्थित संकलन, लिप्यंतरण और डिजिटलीकरण की दिशा में शैक्षणिक एवं सामुदायिक स्तर पर सक्रिय प्रयास किए जा रहे हैं, जो संरक्षण की ठोस संभावनाओं का संकेत देते हैं। वैश्वीकरण, जो एक ओर सांस्कृतिक समरूपीकरण का खतरा उत्पन्न करता है, वहीं डिजिटल तकनीक के माध्यम से लोक संस्कृति के वैश्विक प्रसार की संभावना भी प्रस्तुत करता है। अंततः, नीतिगत हस्तक्षेप, जैसे संकटग्रस्त भाषाओं के संरक्षण की योजना, महत्वपूर्ण किंतु अभी भी सीमित विस्तार वाले प्रयास हैं, जिन्हें अधिक व्यापक भाषायी दायरे तक विस्तारित किए जाने की आवश्यकता है।

अध्ययन के परिणाम

समग्र समीक्षा से यह परिणाम निकलता है कि भारतीय लोकभाषाओं में निहित सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण एक जटिल किंतु आवश्यक कार्य है, जिसकी सफलता तीन प्रमुख स्तंभों पर निर्भर करती है, अर्थात् वैज्ञानिक दस्तावेज़ीकरण, सामुदायिक भागीदारी तथा नीतिगत एवं संस्थागत समर्थन। दस्तावेज़ीकरण के क्षेत्र में भारत ने पीपुल्स लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया और यूनेस्को के सहयोग से उल्लेखनीय प्रगति की है, किंतु लोकसाहित्य के वास्तविक संकलन और डिजिटलीकरण की दिशा में कार्य अभी प्रारंभिक अवस्था में है। सामुदायिक भागीदारी के बिना कोई भी संरक्षण प्रयास दीर्घकालिक रूप से सफल नहीं हो सकता, क्योंकि भाषा और सांस्कृतिक पहचान का संबंध अविभाज्य है। अंततः, नीतिगत हस्तक्षेप की प्रभावशीलता तभी सुनिश्चित हो सकती है जब इन्हें पर्याप्त संसाधन, भौगोलिक विस्तार तथा सतत निगरानी के साथ क्रियान्वित किया जाए।

सीमाएँ एवं भविष्य की संभावनाएँ

प्रस्तुत अध्ययन एक व्यवस्थित मेटा-विश्लेषण के स्थान पर एक वर्णनात्मक समीक्षा पद्धति पर आधारित है, अतः इसके निष्कर्षों को संपूर्ण भारतीय लोकभाषा साहित्य के प्रतिनिधि निष्कर्ष के रूप में देखा जाना चाहिए, न कि किसी विस्तृत व्यवस्थित समीक्षा के रूप में। इसके अतिरिक्त, उपलब्ध शोध साहित्य मुख्यतः कुछ विशिष्ट भाषाओं और क्षेत्रों, यथा हिंदी लोकगीत परंपरा एवं बंजारा बोली, तक केंद्रित है, जबकि भारत की सैकड़ों अन्य संकटग्रस्त भाषाओं पर समान गहराई से अनुभवजन्य शोध की आवश्यकता अभी भी विद्यमान है। भविष्य के शोध में विभिन्न लोकभाषाओं में संरक्षण प्रयासों की तुलनात्मक प्रभावशीलता का मूल्यांकन किया जाना चाहिए, तथा डिजिटलीकरण परियोजनाओं के दीर्घकालिक प्रभाव, समुदाय-स्तरीय स्वामित्व और शैक्षणिक पाठ्यक्रम में स्थानीय ज्ञान-परंपरा के समावेश की सफलता का अनुभवजन्य परीक्षण किए जाने की आवश्यकता है।

संदर्भ सूची

1. ब्लैकबर्न, स्टुअर्ट, एवं ऑपजेनॉर्ट, जीन रॉबर्ट। (2010)। भारत और हिमालय शृंखला। मोसले, क्रिस्टोफर (संपा.), *एटलस ऑफ द वर्ल्ड्स लैंग्वेजेज इन डेंजर* (तृतीय संस्करण)। यूनेस्को प्रकाशन, पेरिस।
2. देवी, गणेश एन. (संपा.)। (2010-2013)। *पीपुल्स लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया*। भाषा शोध व प्रकाशन केंद्र, वडोदरा; ओरिएंट ब्लैकस्वान।
3. पवार, विक्रमसिंह। (2026)। वैश्वीकरण के दौर में भारतीय लोक संस्कृति: चुनौतियाँ, संभावनाएँ और संरक्षण की दिशा। *सहचर ई-पत्रिका* (ISSN: 2395-2873)।
4. मोसले, क्रिस्टोफर (संपा.)। (2010)। *एटलस ऑफ द वर्ल्ड्स लैंग्वेजेज इन डेंजर* (तृतीय संस्करण)। यूनेस्को प्रकाशन, पेरिस।
5. राठौड़, जेतालाल नामदेव, एवं शेख, मोहम्मद शाकिर। (2026)। बंजारा लोक साहित्य का भाषावैज्ञानिक अध्ययन। *सहचर ई-पत्रिका* (ISSN: 2395-2873)।
6. शर्मा, शेखर, एवं बाविस्कर, राजेंद्र काशीनाथ। (2024)। हिंदी लोकगीतों की परंपरा, महत्व और संरक्षण प्रयास। *International Journal of Advanced Research and Multidisciplinary Trends* (*IJARMT*)।
7. योहन्नान, लिट्टी। (2026)। भारतीय ज्ञान परंपरा और लोक साहित्य। *सहचर ई-पत्रिका* (ISSN: 2395-2873)।

© 2026. This article is licensed under the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY 4.0).